पातञ्जल योगदर्शन में समाधि की अवधारणा : एक दृष्टि

Dr. Pushpinder Joshi
Dr. Radha Devi

सारांशः - भारतीय दर्शन भारतीय उपमहाद्वीप की सभ्यताओं द्वारा विकसित विचार और चिन्तन की प्रणालियां हैं। इन्हें वेदों की प्रमाणिकता के आधार पर आस्तिक (सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, पूर्व मीमांसा, उत्तर मीमांसा) और नास्तिक (बौद्ध, जैन, चार्वाक) दो वर्गों में विभाजित किया गया है जो व्यवहारिक और आध्यात्मिक ज्ञान पर विशेष ध्यान आकृष्ट करता है। जहां सांख्य में पुरुष और प्रकृति, योग में चित्तवृत्ति निरोध के लिए अष्टांगयोग, न्याय में तर्क और प्रमाण, वैशेषिक में परमाणुवाद, पूर्व मीमांसा में वैदिक कर्मकाण्ड और उत्तर मीमांसा अर्थात् वेदान्त में ब्रह्म - आत्मा की एकता आदि विषयों का प्रतिपादन किया गया । वहीं पर बौद्ध दर्शन में चार आर्य सत्य और अष्टांग मार्ग, जैन में अहिंसा और स्याद्वाद, चार्वाक में भौतिकता का निरूपण किया गया। भारतीय दर्शन में आत्मा, ब्रह्म, जगत, ज्ञान, नीतिशास्त्र, और सृष्टि के मूल तत्वों का गहन चिन्तन किया गया। प्रायः सभी दर्शनों का परम लक्ष्य त्रिविध तापों से मुक्ति तथा मोक्ष प्राप्ति है जिसके लिए अनेकविध उपाय बताये गये है। योगदर्शन में भी अष्टांगयोग के माध्यम से ब्रह्म साक्षात्कार और मोक्ष प्राप्ति का उपाय बताया गया है। परमगति की प्राप्ति के लिए ब्रह्म से एकाकार आवश्यक है जिसके लिए योगदर्शन में समाधि का महत्व प्रतिपादित किया गया। पतञ्जलि के अनुसार (ध्येय) अर्थ मात्र को निर्भासित करने वाला अपने ज्ञानात्मक रूप से भी रहित सा ध्यान ही समाधि है। स्वयं के स्वरूप का आभास न होकर मात्र ध्येय (ब्रह्म) का आभास होना समाधि है। समाधि में तीन विशेष पहलु है -ध्याता, ध्येय और ध्यान। ध्याता अर्थात् ध्यान करने वाला योगी, ध्येय - ध्यान द्वारा प्राप्त किया जाने वाला लक्ष्य अर्थात् ब्रह्म, ध्यान - जिस साधन या उपाय के द्वारा ध्याता अपने ध्येय को प्राप्त करता है। ध्यान ही जब ध्येय के स्वरूप का आवेश होने के कारण ध्येय के आकार से भासित तथा अपने ज्ञानात्मक रूप से रहित जैसा हो जाता है उस समय उसे समाधि कहा जाता है। अष्टांगयोग की आठवीं और अन्तिम अवस्था समाधि द्वारा साधक स्वयं का आभास न करता हुआ ब्रह्म ही हो जाता है। इस अवस्था में साधक आनन्दानुभूति करता है। जीवन-मुक्ति का आनन्द लेता हुआ शरीर मरणोपरांत विदेह मुक्ति प्राप्त करता है।

कुञ्जीशब्दाः योगदर्शन, समाधि, अष्टांग योग, वृत्ति ।

भारतीय दर्शन भारतीय उपमहाद्वीप की सभ्यताओं द्वारा विकसित विचार और चिन्तन की प्रणालियां हैं। इन्हें वेदों की प्रमाणिकता के आधार पर आस्तिक (सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, पूर्व मीमांसा, उत्तर मीमांसा) और नास्तिक (बौद्ध, जैन, चार्वाक) दो वर्गों में विभाजित किया गया है जो व्यवहारिक और आध्यात्मिक ज्ञान पर विशेष ध्यान आकृष्ट करता है। जहां सांख्य में पुरुष और प्रकृति, योग में चित्तवृत्ति निरोध के लिए अष्टांगयोग, न्याय में तर्क और प्रमाण, वैशेषिक में परमाणुवाद, पूर्व मीमांसा में वैदिक कर्मकाण्ड और उत्तर मीमांसा अर्थात् वेदान्त में ब्रह्म - आत्मा की एकता आदि विषयों का प्रतिपादन किया गया । वहीं पर बौद्ध दर्शन में चार आर्य सत्य और अष्टांग मार्ग, जैन में अहिंसा और स्याद्वाद, चार्वाक में भौतिकता का निरूपण किया गया। भारतीय दर्शन में आत्मा, ब्रह्म, जगत, ज्ञान, नीतिशास्त्र, और सृष्टि के मूल तत्वों का गहन चिन्तन किया गया।

प्राय: सभी दर्शनों का परम लक्ष्य त्रिविध तापों [1] से मुक्ति तथा मोक्ष प्राप्ति है जिसके लिए अनेकविध उपाय[2] बताये गये है। योगदर्शन में भी अष्टांगयोग के माध्यम से ब्रह्म साक्षात्कार और मोक्ष प्राप्ति का उपाय बताया गया है

"यमनियमऽऽसनप्राणायामप्रत्याहारधारणाध्यानसमाधयोऽष्टावङ्गानि।"[3]

योग[4] का अर्थ है मिलना, आध्यात्मिक दृष्टिकोण से आत्मा का परमात्मा में मिलना योग है और इस मिलन को प्रत्यक्ष जानना योगदर्शन है। इस प्रत्यक्ष जानकारी का साधन अष्टांगयोग की आठवीं और अन्तिम अवस्था समाधि[5] है।

"योग: समाधि:"[6]

योग के विषय में महाभारत में शुकदेव मुनि ने कहा कि योग के बिना परमगति (मोक्ष) प्राप्ति की ही नहीं जा सकती।

" न तु योगमृते प्राप्तुं शक्या सा परमा गति:",[7]

परमगति की प्राप्ति के लिए ब्रह्म से एकाकार आवश्यक है जिसके लिए योगदर्शन में समाधि का महत्व प्रतिपादित किया गया। पतञ्जलि के अनुसार (ध्येय) अर्थ मात्र को निर्भासित करने वाला अपने ज्ञानात्मक रूप से भी रहित सा ध्यान ही समाधि है।

"तदेवार्थमात्रनिर्भासं स्वरूपशून्यमिव समाधि:"[8]

अर्थात् स्वयं के स्वरूप का आभास न होकर मात्र ध्येय (ब्रह्म) का आभास होना समाधि है। समाधि में तीन विशेष पहलु है -ध्याता, ध्येय और ध्यान। ध्याता अर्थात् ध्यान करने वाला

योगी, ध्येय - ध्यान द्वारा प्राप्त किया जाने वाला लक्ष्य अर्थात् ब्रह्म, ध्यान - जिस साधन या उपाय के द्वारा ध्याता अपने ध्येय को प्राप्त करता है।

ध्यान ही जब ध्येय के स्वरूप का आवेश होने के कारण ध्येय के आकार से भासित तथा अपने ज्ञानात्मक रूप से रहित जैसा हो जाता है उस समय उसे समाधि कहा जाता है।

"ध्यानमेव ध्येयाकारनिर्भासं प्रत्ययात्मकेन स्वरूपेण शून्यमिव यदा भवति ध्येयस्वभावावेशावेशात्तदा समाधिरित्युच्यते"[9]

'अर्थमात्रनिर्भासम् और स्वरूपशून्यमिव' अर्थात् ध्येयार्थस्वरूप का प्रकाशन तथा अपने स्वरूप का शून्य जैसा होना ऐसा कहा गया है।जब ध्यान इन दो विशेषणों वाला होता है तब समाधि की संज्ञा से अभिहित किया जाता है। ध्यान से ही समाधि की ओर अग्रसर हुआ जाता है।

समाधि के भेद - समाधि दो प्रकार की है

सम्प्रज्ञात समाधि

असम्प्रज्ञात समाधि

वेदान्तसार में सविकल्पक और निर्विकल्पक समाधि से अभिहित किया गया है।

"समाधिर्द्विविध:। सविकल्पको निर्विकल्पकश्चेति।"[10]

समाधि की अवस्था ध्यानोपरान्त प्राप्त होती है।ध्यान में किसी एक वस्तु का आलम्बन किया जाता है।जब यह आलम्बन चिरकाल तक बना रहे तो सम्प्रज्ञात समाधि कहलाती है इसमें चित्त एकाग्र हो जाता है। इस समाधि के चिरकाल के अभ्यास से साधक का चित्त सब वृत्तियों से निरूद्ध हो जाता है। तथा पूर्व आलम्बन भी धीरे-धीरे क्षीण हो जाता है, यह असम्प्रज्ञात समाधि है। ये दोनों समाधि की अवस्था एकाग्र चित्त और निरूद्ध चित्त में होती है। पञ्च चित्त भूमि होती है

" क्षिप्तं मूढं विक्षिप्तमेकाग्रं निरूद्धमिति चित्त भूमि:"[11]

इन पञ्च चित्तभूमियों में अन्तिम दो एकाग्र और निरूद्ध में सम्प्रज्ञात और असम्प्रज्ञात समाधि होती है।

एकाग्र चित्त में वह अविचलित अक्षुब्ध अवस्था है जब ध्येय वस्तु के ऊपर चित्त चिरकाल तक रहता है।इस योग का नाम सम्प्रज्ञात या सबीज समाधि है क्योंकि इस अवस्था में चित्त के समाहित होने के लिए कोई न कोई बीज या आलम्बन बना रहता है परन्तु निरूद्ध दशा में असम्प्रज्ञात समाधि का उदय होता है जब चित्त की समस्त वृत्तियां निरुद्ध या बन्द हो जाती है। यहां किसी भी वस्तु का आलम्बन नहीं रहता। अत: इसे निर्बीज या असम्प्रज्ञात समाधि कहते है।[12]

सम्प्रज्ञात समाधि - एकाग्र चित्त की यह अवस्था, आलम्बन रूप बुद्धि में स्थित अर्थ को पूर्णतया प्रकाशित करती है। क्लेशों (अविद्याऽस्मितारागद्वेषाभिनिवेशा: पञ्च अश्लेशा:)[13] को

नष्ट करती है, कर्म संस्कारों को शिथिल करती है, असम्प्रज्ञात समाधि को सामने लाती है वह सम्प्रज्ञात समाधि कहलाती है।

" यस्त्वेकाग्रे चेतसि सद्भूतमर्थं प्रद्योतयति, क्षिणोति च क्लेशान्, कर्मबन्धनानि श्लथयति, निरोधमभिमुखं करोति, स सम्प्रज्ञातोयोग इत्याख्यायते।[14]

वेदान्तसार के रचयिता सदानन्द योगी ने भी समाधि विषयक अवधारणा प्रस्तुत करते हुए कहा कि सविकल्पक समाधि में ज्ञाता, ज्ञेय और ज्ञान के विकल्प के लय की अपेक्षा न करते हुए उस अद्वितीय वस्तु में तदाकाराकारित अर्थात् अद्वितीय वस्तु रूप ब्रह्म के आकार को धारण करने वाली चित्तवृत्ति को उस अद्वितीय वस्तु में लगाना ही सविकल्पक समाधि है। उस समय मिट्टी के बने हाथी आदि की प्रतीति होने पर भी जैसे मिट्टी की ही प्रतीति होती है, उसी प्रकार चित्त में द्वैत की प्रतीति होने पर भी अद्वैत वस्तु की प्रतीति होती है।

"तत्र सविकल्पको नाम ज्ञातृज्ञानादिविकल्पलयानपेक्षयाद्वितीयवस्तुनि तदाकाराकारितायाश्चित्तवृतेरवस्थानम्। तदा मृण्मयगजादिभानेऽपि मृद्भानवत् द्वैतभानेऽप्येद्वैतं वस्तु भासते।"[15]

इस समाधि में ध्याता, ध्येय और ध्यान तीनों का आभास रहता है।

सम्प्रज्ञात समाधि के सोपान- सम्प्रज्ञात समाधि की सिद्धि क्रमशः चार सोपानों में होती है।

"वितर्कविचारानन्दाऽस्मितानुगमात्सम्प्रज्ञात:"[16]

वितर्क, विचार, आनन्द और अस्मिता का अनुगम अर्थात् साक्षात्कारोदय होने से सम्प्रज्ञात समाधि होती है।

सवितर्क सम्प्रज्ञात समाधि - आलम्बन में चित्त की स्थूल रूप की परिपूर्णता वितर्क है।

"वितर्कश्चित्तस्यालम्बने स्थूल आभोग:"[17]

स्थूल आभोग से तात्पर्य है पृथ्वी आदि स्थूल पदार्थों को विषय के रूप में लेकर, पूर्व और अपर के क्रम का अनुसंधान करते हुए तथा शब्द और अर्थ के उल्लेख की एकता दिखाते हुए किसी भावना का प्रवृत्त होना।

"पृथिव्यादीनि स्थूलानि विषयत्वेनादाय पूर्वपरानुसन्धानेन शब्दार्थोल्लेखसम्भेदेन च भावना प्रवर्त्तते से समाधि: सवितर्क:" ।[18]

इस वितर्कानुगत सम्प्रज्ञात समाधि में स्थूल पदार्थों का प्राधान्य रहता है और विचार, आनन्द, अस्मिता गौण रूप में विद्यमान रहते हैं।

सविचार सम्प्रज्ञात समाधि - सूक्ष्म रूप की परिपूर्णता विचार है।

" सूक्ष्मो विचार:"[19]

सूक्ष्म विचार से तात्पर्य है तन्मात्रा[20] (रूप,रस, गन्ध, स्पर्श,) तथा अन्त:करण[21] (मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार)

इन सूक्ष्म पदार्थों को विषय बनाकर देश, कालादि (निमित्त) के विचार से मिलाकर भावना उत्पन्न होना।

" यदा तन्मात्रान्त:करणलक्षणं सूक्ष्मं विषयमालम्ब्य देशाद्यवच्छेदेन भावना प्रवर्त्तते तदा सुविचार:" ।[22]

सविचार सम्प्रज्ञात समाधि वितर्क रहित तथा विचार, आनन्द, अस्मिता युक्त होती है। इसमें विचार प्रधान रूप में तथा आनन्द और अस्मिता गौण रूप में विद्यमान रहते हैं।

सानन्द सम्प्रज्ञात समाधि - आह्लाद रूप की परिपूर्णता आनन्द है।

"आनन्दो ह्लाद:"[23]

जब रजोगुण तथा तमोगुण के लेशमात्र अंश से युक्त चित्त की भावना की जाती है तब सुख और प्रकाश से निर्मित सत्त्व का उद्रेक होता है। यह सानन्द समाधि है।

"यदा रजस्तमोलेशानुविद्धं चित्तं भाव्यते तदा सुख प्रकाशमयस्य सत्त्वस्योद्रेकात्सानान्द:"[24]

वितर्क और विचार रहित इस समाधि में आनन्द का प्राधान्य रहता है तथा अस्मिता गौण रूप से वर्तमान रहते हैं।

सास्मिता सम्प्रज्ञात समाधि - एकाकार बुद्धि रूप की परिपूर्णता अस्मिता है।

"एकात्मिका संविदस्मिता"[25]

जब रजोगुण और तमोगुण का देश भी न रहे, वैसे शुद्ध सत्वगुण पर आधारित होकर भावना उत्पन्न हो तब सत्त्व के भी दब जाने से तथा चित्ति शक्ति के उद्रेक से केवल सत्ता का ही बचा रह जाना सास्मिता समाधि है।

"यदा रजस्तमोलेशानभिभूतं शुद्धं सत्त्वमालम्बनीकृत्य सा प्रवर्त्तते भावना तदा तस्यां सत्त्वस्यन्यग्भावाच्चितिशक्तेरुद्रेकाच्च सत्तामात्रावशेषत्वेन सास्मित: समाधि:"[26]

यह समाधि केवल अस्मितानुगत होती है। इसमें वितर्क विचार और आनन्द के आभोग वर्तमान नहीं रहते अर्थात् गौण रूप से भी नहीं रहते। यहां केवल 'अहमस्मि' आकार ही शेष रहता है। इसमें जीवात्मा और परमात्मा को जड़ से पृथक् करके देखते है। 'अहमस्मि' अर्थात् मैं हूं, इससे शरीर का अस्तित्व समाप्त हो जाता है तथा आत्मभाव शेष रहता है।

सम्प्रज्ञात समाधि में ध्येय मात्र का अवभास होने पर भी ध्याता की कुछ न कुछ तो अवस्थिति रहती ही है। उस स्थिति के विषय में आचार्य सदानन्द योगी ने उपनिषद् का उद्धरण देते हुए स्पष्ट किया कि मैं आत्मा ही ब्रह्म हूं।

"अहं ब्रह्मास्मि"[27]

इस अनुभव वाक्य में मैं (आत्मा) का अस्तित्व कुछ तो शेष रहता ही है। इससे ज्ञात होता है कि आत्मा को अपने आत्म स्वरूप का भी बोध है तथा स्वयं के ब्रह्म के आकार में आकारित होने का आनन्द भी है।

असम्प्रज्ञात समाधि - जब सभी वृत्तियों का निरोध हो जाता है तब असम्प्रज्ञात समाधि होती है।

" सर्ववृत्तिनिरोधे त्वसम्प्रज्ञात: समाधि:"[28]
सम्प्रज्ञात समाधि में जब साधक को स्वयं के ब्रह्म होने का अनुभव होता है तत्पश्चात् निरन्तर उसी अवस्था का अभ्यास करते -करते ब्रह्मास्मि वाले भाव का भी निरोध हो जाता है, उस समय असम्प्रज्ञात समाधि होती है।

" विरामप्रत्ययाभ्यासपूर्व: संस्कारशेषोऽन्य:"[29]
पर वैराग्य के अभ्यासपूर्वक तथा संस्कारमात्रावशिष्ट समाधि सम्प्रज्ञात से भिन्न असम्प्रज्ञात समाधि है। विराम का अर्थ चित्तवृत्तियों का निरोध होना तथा प्रत्यय का अर्थ उसका कारण अर्थात् चित्तवृत्तियों के निरोध का कारण विराम प्रत्यय अर्थात् पर वैराग्य है। पर वैराग्य तब होता है जब पुरुषकी ख्याति (साक्षात्कार) के कारण गुणों के प्रति उपेक्षा होती है।

" तत्परं पुरुषख्यातेर्गुणवैतृष्णम्"[30]
पुरुष के साक्षात्कार हो जाने के कारण साधक के चित्त की जो सात्विक वृत्ति के प्रति भी वितृष्णा हो जाती है उसी को 'पर वैराग्य' कहते है। परवैराग्य ज्ञान का चरमकोटिक वैशद्यमात्र है, जिसका उदय होने पर आत्मदर्शी योगी ऐसा मानता है कि प्राप्तव्य प्राप्त हो गया, नष्ट करने योग्य क्लेश नष्ट हो गये और श्रृंखलाबद्ध संसार चक्र छूट गया, जिसके टूटे बिना जीव जन्म लेकर मरता तथा मर कर जन्म लेता रहता है। ज्ञान की पराकाष्ठा ही परवैराग्य है।
"तत्ज्ञानप्रसादमात्रम्, यस्योदये प्रत्यूदितख्यातिरेवं मन्यते प्राप्तं प्रपणीयम्, क्षीणा: क्षेतव्या: क्लेशा: छिन्न: श्लिष्टपर्वा भवसङ्क्रम:, यस्याविच्छेदाज्जनित्वा म्रियते, मृत्वा च जायते इति। ज्ञानस्यैव पराकाष्ठा वैराग्यम्।" [31]

असम्प्रज्ञात समाधि के भेद - यह समाधि दो प्रकार की होती है। उपाय प्रत्यय तथा भव प्रत्यय।
" स खल्वयं द्विविध: - उपायप्रत्ययो भवप्रत्ययश्च।"[32]

भवप्रत्यय समाधि - यह समाधि विदेहों तथा प्रकृतिलीनों की होती है।

" भवप्रत्ययो विदेह प्रकृति लयानाम्।"[33]

विदेह नामक देवताओं को भवप्रत्यय असम्प्रज्ञात समाधि होती है।वे अपने संस्कारमात्रावशिष्ट चित्त से कैवल्य का सा अनुभव करते हुए अपने पूर्व संस्कारों के अनुरूप फलों को भोगते हुए समाप्त करते हैं। वैसे ही प्रकृतिलीन देवगण भी अकृतकृत्य चित्त के प्रकृति में लीन हो जाने पर कैल्यपद का सा अनुभव करते रहते हैं, जब तक उनका चित्त अकृतकार्यता के कारण फिर से उत्तर लौकिक दशा में नहीं उतर आता।

" विदेहानां देवानां भवप्रत्ययः। ते हि स्वसंस्कारमात्रोपगेन चित्तेन कैवल्यपदमिवानुभवन्तः स्वसंस्कारविपाकं तथाजातीयकमतिवाहयन्ति। तथा प्रकृतिलयाः सांधिकारेचेतसि प्रकृतिलीने कैवल्यपदमिवानुभवन्ति, यावन्न पुनरावर्त्ततेऽधिकिरवशाच्चित्तमिति।"[34]

उपाय प्रत्यय समाधि - विदेह और प्रकृति लीन से भिन्न दूसरों की असम्प्रज्ञात समाधि श्रद्धा, वीर्य, स्मृति, समाधि और प्रज्ञापूर्वक होती है।

" क्षद्धावीर्यस्मृतिसमाधिप्रज्ञापूर्वक इतरेषाम्।"[35]

उपायप्रत्यय असम्प्रज्ञात समाधि योगियों की होती है। श्रद्धा, चित्त की अभिरुचि है, माता की भांति यह योगी की रक्षा करती है। श्रद्धालु विवेकाभिलाषी योगी को धारणारूपी प्रयत्नात्मक उत्साह उत्पन्न होता है। इस प्रकार के उत्साहसम्पन्न योगी का ध्यान सधता है। ध्यान के उदित होने पर चित्त विक्षेपहीन होकर समाहित होता है। समाहित चित्त को विवेकज्ञान उत्पन्न होता है जिससे योगी समस्त वस्तुओं को ठीक - ठीक-ठीक जान लेता है, इस विवेक ज्ञान के अभ्यास तथा एतद्विषयक पर वैराग्य से असम्प्रज्ञात समाधि सिद्ध होती है।

" उपायप्रतत्ययो योगिनां भवति। श्रद्धा चेतसः सम्प्रसादः। सा हि जननीव कल्याणी योगिनं पाति। तस्य हि श्रद्धधानस्य विवेकार्थिनो वीर्यमुपजायते। समुपजातवीर्यस्य स्मृतिरुपतिष्ठते। स्मृत्युपस्थाने च चित्तमानाकुलं समाधीयते। समाहितचित्तस्य प्रज्ञाविवेक उपावर्तते। येन यथावद् वस्तु जानाति। तदभ्यासात्तद्विषयाच्च वैराग्यादसम्प्रज्ञातः समाधिर्भवति।"[36]

इस प्रकार असम्प्रज्ञात समाधि के दो भेद हैं।

समाधि के अङ्ग

पूर्व में योग के अष्ट अङ्गों के विषय में बताया गया। उसमें से अन्तिम तीन अङ्ग धारणा, ध्यान, समाधि को संयम कहा जाता है।

" तदेतद् धारणाध्यानसमाधित्रयमेकत्र संयमः"[37]

ये तीनों अङ्ग सम्प्रज्ञात समाधि के अन्तरङ्ग माने जाते हैं और असम्प्रज्ञात समाधि के बहिरङ्ग।

"त्रयमन्तरङ्गं पूर्वेभ्य:"[38]

"तदपि बहिरङ्गं निर्बीजस्य"[39]

असम्प्रज्ञात समाधि में धारणा, ध्यान, समाधि को अन्तरङ्ग न मानकर बहिरङ्ग माना गया है क्योंकि समाधि की इस अवस्था में इन तीनों का भी निरोध हो जाता है।

असम्प्रज्ञात समाधि को निर्विकल्पक समाधि का नाम देते हुए इसके विषय में आचार्य सदानन्द योगी ने कहा कि समाधि की इस अवस्था में ज्ञाता, ज्ञेय और ज्ञान के विकल्प का नाश हो जाने की अपेक्षा से अद्वितीय वस्तु (ब्रह्म) में ब्रह्म के आकार से आकारित चित्तवृत्ति अत्यन्त अभिन्न रूप में स्थित हो जाती है अर्थात् ध्याता, ध्येय और ध्यान अभेद होकर ध्येय (ब्रह्म) ही शेष रहता है।

"निर्विकल्पकस्तु ज्ञातृज्ञानादिविकल्पलयापेक्षयाऽद्वितीयवस्तुनि तदाकाराकारितायाश्चित्तवृत्तेरतितरामेकीभावेनावस्थानम्"[40]

उदाहारणार्थ जिस प्रकार नमक के जल में घुल जाने से नमक की कोई प्रतीति न रहकर जल ही प्रतीत होता है, नमक तो जलाकाराकारित हो जाता है उसी प्रकार ब्रहमाकाराकारित चित्तवृत्ति भी प्रतीति रहित हो जाती है।

" तदा तु जलाकाराकारित लवणानवभासेन
जलमात्रावभासवदद्वितीयवस्त्वाकाराकारितवृतृयनवभासेनाद्वितीयवस्तुमात्रमवभासते"[41]

इस अवस्था में साधक को स्वयं की लेशमात्र भी प्रतीति न होकर ब्रह्ममात्र की प्रतीति होने लगती है तब उपनिषद् का वाक्य " ब्रह्मविद् ब्रह्मैव भवति"[42] चरितार्थ हो जाता है। साधक स्वयं परब्रह्म हो जाता है। असम्प्रज्ञात समाधि में लीन योगी की अवस्था के विषय में श्रीकृष्ण ने अर्जुन को बताया कि जिस प्रकार वायु रहित स्थान में दीपक हिलता - डुलता नहीं, उसी तरह जिस योगी का मन वश में होता है वह आत्मतत्व के ध्यान में सदा स्थिर रहता है।

" यथा दीपो निवातस्थानो नेङ्गते सोपमा स्मृता
योगिनो धतचित्तस्य युञ्जतो योगमात्मन:"[43]

चित्तवृत्तियों के ब्रह्माकाराकारित होने की श्रेष्ठता का प्रतिपादन करते हुए कृष्ण ने कहा कि हे अर्जुन योगी पुरुष तपस्वी से, ज्ञानी से तथा सकामकर्मी से बढ़कर होता है। अतः तुम सभी प्रकार से योगी बनो अर्थात् अपनी चित्तवृत्तियों को ब्रह्म में लीन कर दो।

" तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योपि मतोऽधिक:
कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन।"[44]

निष्कर्ष - निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि मानव जीवन का जो परम लक्ष्य मोक्ष प्राप्ति है उसका साधन समाधि है। अष्टांगयोग की आठवीं और अन्तिम अवस्था समाधि द्वारा साधक स्वयं का आभास न करता हुआ ब्रह्म ही हो जाता है। इस अवस्था में साधक आनन्दानुभूति करता है। जीवन-मुक्ति का आनन्द लेता हुआ शरीर मरणोपरांत विदेह मुक्ति प्राप्त करता है।

सन्दर्भग्रन्थसूची :-

1.दु:खत्रयाभिघाताज्जिज्ञासा तदपघातके हेतौ”

आचार्य, डॉ० रामकृष्ण, सांख्यकारिका, साहित्य भण्डार , सुभाष बाजार, मेरठ, नवीन (प्रथम)संस्करण- कालिका -1 पृष्ठ संख्या -1

2.”एवं तत्त्वाभ्यासान्नास्मि न मे नाहमित्यपरिशेषम्”

आई. बी. आई.डी कारिका -64 पृष्ठ संख्या -199

3.श्रीवास्तव, डाॅ० सुरेशचन्द्र, पातञ्जलयोगदर्शन, चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी, 2019 ई०, सूत्र- 2/29 पृष्ठ संख्या -265

4.युज् भावादौ+घञ् (जुड़ना, मिलना)

आप्टे, वामन शिवराम, संस्कृत - हिन्दी शब्दकोश, चौखम्भा विद्याभवन वाराणसी, 2016 पृष्ठ संख्या -839

5.(क)सम्+आ+ना+कि (भाव चिन्तन, किसी एक विषय पर मन को केन्द्रित करना, ब्रह्मचिन्तन में पूर्ण लीनता)

आई. बी. आई. बी. पृष्ठ संख्या - 1076

(ख) religious and abstract meditation

Williams, M. Monier, English Sanskrit Dictionary, Parimal publication, Shakti nagar, Delhi, First edition 2018

Page number. -719

6.श्रीवास्तव, डाॅ० सुरेशचन्द्र, पातञ्जलयोगदर्शन व्यास भाष्य, चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी 2019

सूत्र- 1/1 पृष्ठ संख्या -1

7. महाभारत, गीता प्रेस गोरखपुर, अठारहवां, सं० 2076 पञ्चम खण्ड, शान्ति पर्व , 12-331-52 पृष्ठ संख्या - 1055

8. श्रीवास्तव, डाॅ० सुरेशचन्द्र, पातञ्जलयोगदर्शन, चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी, 2019, सूत्र-3/3 पृष्ठ संख्या -323

9. आई.बी.आई.डी. व्यास भाष्य, पृष्ठ संख्या -323

10. यादव, डाॅ० एच. एन., वेदान्त सार, हरीश प्रकाशन मन्दिर, आगरा, प्रथम संस्करण, पृष्ठ संख्या -161

11. श्रीवास्तव, डाॅ० सुरेशचन्द्र, पातञ्जलयोगदर्शन, व्यास भाष्य, चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 2019 , सूत्र-1/1 पृष्ठ संख्या -1

12. उपाध्याय, बलदेव, भारतीय दर्शन, चौखम्भा संस्कृत भवन, वाराणसी, प्रथम संस्करण-2021, पृष्ठ संख्या - 297-298

13. श्रीवास्तव डाॅ० सुरेशचन्द्र पातञ्जलयोगदर्शन चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी प्रथम संस्करण- 2019, सूत्र -2/3 पृष्ठ संख्या -161

14. आई.बी.आई.डी. व्यास भाष्य, सूत्र-1/1 पृष्ठ संख्या -1

15. यादव, डाॅ० एच.एन., वेदान्त सार हरीश प्रकाशन मन्दिर आगरा प्रथम संस्करण, पृष्ठ संख्या -161

16. श्रीवास्तव, डाॅ० सुरेशचन्द्र, पातञ्जलयोगदर्शन, व्यास भाष्य, चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी प्रथम संस्करण- 2019, सूत्र -1/17 पृष्ठ संख्या -62

17. आई. बी. आई. डी. सूत्र- 1/17 पृष्ठ संख्य-63

18. सरस्वती, मधुसूदन, सर्वदर्शनसंग्रह, आनन्दाश्रममुद्राणलय, सं० 1906 पृष्ठ संख्या -132

19. श्रीवास्तव डाॅ० सुरेशचन्द्र पातञ्जलयोगदर्शन व्यास भाष्य चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी प्रथम संस्करण- 2019, सूत्र -1/17 पृष्ठ संख्या 63

20. आचार्य, डाॅ० रामकृष्ण, सांख्यकारिका, साहित्य भण्डार, सुभाष बाजार, मेरठ, प्रथम संस्करण, कारिका -38 पृष्ठ संख्या -152

21. यादव, डाॅ० एच. एन., वेदान्तसार, हरीश प्रकाशन मन्दिर, आगरा, प्रथम संस्करण, पृष्ठ संख्या -80

22. सरस्वती, मधुसूदन, सर्वदर्शनसंग्रह आनन्दाश्रममुद्राणलय सं० 1906, पृष्ठ संख्या -132

23. श्रीवास्तव, डाॅ० सुरेशचन्द्र, पातञ्जलयोगदर्शन, व्यास भाष्य चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी प्रथम संस्करण- 2019, सूत्र -1/17 पृष्ठ संख्या-63

24. सरस्वती, मधुसूदन, सर्वदर्शनसंग्रह, आनन्दाश्रममुद्राणलय सं० -1906, पृष्ठ संख्या -132

25. श्रीवास्तव, डाॅ० सुरेशचन्द्र, पातञ्जलयोगदर्शन, व्यास भाष्य चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी प्रथम संस्करण- 2019, सूत्र -1/17 पृष्ठ संख्या -63

26.सरस्वती, मधुसूदन, सर्वदर्शनसंग्रह, आनन्दाश्रममुद्राणलय सं० -1906, पृष्ठ संख्या -132

27. बृहदारण्यक उपनिषद्, गीता प्रेस, गोरखपुर, उन्नीसवां संस्करण- सं० 1974, मन्त्र -1/4/10 पृष्ठ संख्या - 241

28.सरस्वती, मधुसूदन, सर्वदर्शनसंग्रह, आनन्दाश्रममुद्राणलय सं० -1906, पृष्ठ संख्या -132

29. श्रीवास्तव, डा॓० सुरेशचन्द्र, पातञ्जलयोगदर्शन, चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, प्रथम संस्करण- 2019, सूत्र -1/18 पृष्ठ संख्या- 66

30. आई. बी. आई. डी. सूत्र -1/16 पृष्ठ संख्या -59

31. आई. बी. आई. डी. व्यास भाष्य, सूत्र -1/16 पृष्ठ संख्या -59

32. आई. बी. आई. डी. पृष्ठ संख्या -68

33. आई. बी. आई. डी. सूत्र -1/19 पृष्ठ संख्या -68

34. आई. बी. आई. डी. व्यास भाष्य, सूत्र -1/19 पृष्ठ संख्या -68

35. आई. बी. आई. डी. सूत्र -1/120 पृष्ठ संख्या -73

36. आई. बी. आई. डी. व्यास भाष्य, सूत्र -1/20

पृष्ठ बनाएं -73

37. आई. बी. आई. डी. सूत्र- 3/4 पृष्ठ संख्या -325

38. आई. बी. आई. डी. सूत्र -3/7 पृष्ठ संख्या -328

39. आई. बी. आई. डी. सूत्र -3/8 पृष्ठ संख्या- 330

40. यादव, डा॓० एच.एन., वेदान्तसार, हरीश प्रकाशन मन्दिर, आगरा, प्रथम संस्करण पृष्ठ संख्या -163

41. आई. बी. आई. डी. पृष्ठ संख्या -164

42. गोयन्दका, हरिकृष्ण दास,ईशादि नौ उपनिषद्, गीता प्रेस, गोरखपुर, छत्तीसवां संस्करण सं०-2047 , मुण्डकोपनिषद - 3/2/9 पृष्ठ संख्या -279

43. श्रीमद्भगवद्गीता, भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट, जुहू, मुम्बई, द्वितीय संस्करण, श्लोक -6/19 पृष्ठ संख्या- 240

44. आई. बी. आई. डी. श्लोक -6/46 पृष्ठ संख्या 262

सहायकग्रन्थाः

1.श्रीवास्तव, डा॓०सुरेशचन्द्र, पातञ्जलयोगदर्शन, चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी प्रथम संस्करण-,2019

2.यादव, डा॓० एच. एन., हरीश प्रकाशन मन्दिर, आगरा प्रथम संस्करण

3.आचार्य, डा॓० रामकृष्ण, सांख्यकारिका, साहित्य भण्डार, सुभाष बाजार मेरठ, प्रथम संस्करण

4 महाभारत, गीता प्रेस, गोरखपुर, अठारहवां। संस्करण, सं०2076

5 उपाध्याय, बलदेव, भारतीय दर्शन, चौखम्भा संस्कृत भवन, वाराणसी, प्रथम संस्करण- 2021

6 गोयन्दका, हरिकृष्ण दास, ईशादि नौ उपनिषद्, गीता प्रेस, गोरखपुर, छत्तीसवां संस्करण सं० 2047

7 श्रीमद्भगवद्गीता, भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट, जुहू, मुम्बई, द्वितीय संस्करण

8 बृहदारण्यक उपनिषद्, गीता प्रेस, गोरखपुर, उन्नीसवां संस्करण- सं०1974

9 सरस्वती, मधुसूदन, सर्वदर्शनसंग्रह, आनन्दाश्रममुद्राणलय सं० -1906

10आप्टे वामन शिवराम, संस्कृत -हिन्दी शब्दकोश, चौखम्भा, विद्याभवन वाराणसी, संस्करण - 2016

11 Williams, M. Monier, English Sanskrit Dictionary, Parimal publication, Shakti Nagar, Delhi, First edition 2018

Associate Professor & Head, Department of Sanskrit & Pali, Punjabi University, Patiala

Assistant Professor, Department of Sanskrit & Pali, Punjabi University, Patiala